

लोह शृंखलाओं से बँधकर, नख-शिख तक जकड़ा हो तन ।
रगड़ खाय छिल जाती जंघा, अती त्रस्त उत्पीड़न मन॥
ऐसे कारागृह का जीवन, जो भी जीते बंदी जन।
नाम आपका जपते भगवन, तत्क्षण खुल जाते बंधन॥४६॥

निर्मल गुण का करें स्तवन, प्रतिदिन चिंतन और मनन।
भयाक्रांत पीड़ित हों कितने, सभी दुखों का होय हनन॥
हाथी, सिंह और दावानल, सर्प, युद्ध, सागर, प्रहार।
सभी अष्ट भय करें पलायन, गाओ गीत मंगलाचार॥४७॥

बहुरंगी भावों से पुष्पित, उपवन है यह दिव्य ललाम।
भक्तिभाव से गूँथा इसको, 'अखिल' कुसुम चुनकर अभिराम॥
'मानतुंग'की सुंदर रचना, सभी भव्यजन याद करें।
श्रद्धा सहित पठन-पाठन कर, मोक्ष लक्ष्मी तुरत वरें॥४८॥

ऐसै जिनराज ताहि वंदत बनारसी

जामैं लोकालोक के सुभाव प्रतिभासे सब,
जगी, ग्यान सकति विमल जैसी आरसी।
दर्शन उद्योत लीयौ अंतराय अंत कीयौ,
गयौ महा मोह भयौ परम महारसी॥
संन्यासी सहज जोगी जोग सौं उदासी जामैं,
प्रकृति पच्चासी लागि रही जरि छारसी।
सौहै घट-मंदिर मैं चेतन प्रगटरूप,
ऐसे जिनराज ताहि वंदत बनारसी॥२९॥

—कविवर बनारसीदासजी : समयसार नाटक, जीवद्वार